कानई लाल बेड़ा

बनाम

भारत संघ व अन्य

सितम्बर 24, 2007

(न्यायमूर्ति एस. बी. सिन्हा व न्यायमूर्ति एच एस बेदी)

सेवा विधि:

केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल नियम - नियम 27- विभागीय जांच, अपचारी को सेवा से बर्खास्त करने के बाद दूसरी जांच शुरू करना, जिसमें पाया गया कि पहली जांच में उसके खिलाफ आरोप आंशिक रूप से साबित हुए हैं -- की स्थिरता -- अभिनिर्धारित -- व्यवहार्य नहीं -एक बार विभागीय कार्यवाही शुरू होने के बाद, इसे तार्किक अंत तक लाया जाना चाहिए --निष्कर्ष पर पहुंचा जाना चाहिए कि क्या अपचारी लगाए गए आरोपों का दोषी था या नहीं। तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि लंबा समय बीत चुका है और अनुशासनात्मक प्राधिकरण ने नियम 27 का अनुपालन न करके खुद को गलत दिशा में निर्देशित किया है। विवेकाधीन क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए, अपराधी को सेवा में बहाल किया जाएगा -- हालांकि, चूंकि अपचारी ने उचित समय के भीतर कथित कदाचार के आरोप के खिलाफ उच्च न्यायालय का दरवाजा नहीं खटखटाया, इसलिए अपराधी को

पिछला वेतन देने से इनकार कर दिया गया- भारत का संविधान, 1950 -- अनुच्छेद 142

अपीलार्थी, सीआरपीएफ में एक कांस्टेबल, अनधिकृत रूप से अनुपस्थित रहा और उसे सिविल लाइंस में सात दिनों के लिए कारावास की सजा सुनाई गई। इसके बाद, अपीलार्थी के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू की गई और उसे सिविल लाइंस में दस दिनों के लिए कैद की सजा सुनाई गई। हालांकि, उन्होंने इसका पालन करने से इनकार कर दिया और उनके खिलाफ एक और अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू की गई। उनके खिलाफ लगाए गए आरोप आंशिक रूप से साबित हुए और उन्हें सेवा से बर्खास्त कर दिया गया। लेकिन एक और अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू करने का निर्देश दिया गया। अपीलार्थी ने बर्खास्तगी आदेश के खिलाफ अपील दायर की और उसे खारिज कर दिया गया। रिट याचिका और अपील दोनों को लंबे विलंब के आधार पर खारिज कर दिया गया। इसलिए यह वर्तमान अपील।

अपील को आंशिक रूप से स्वीकार करते हुए, न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया:

1.1 केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल नियम 1955 का नियम 27, अन्य बातों के साथ-साथ, विभागीय जांच करने की प्रक्रिया निर्धारित करता है। एक बार अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू हो जाने के बाद, उसे उसके तार्किक

अंत तक लाया जाना चाहिए, जिसका अर्थ है कि इस निष्कर्ष पर पहुंचना आवश्यक है कि दोषी अधिकारी अपने खिलाफ लगाए गए आरोपों का दोषी है या नहीं। दी हुई स्थिति में अतिरिक्त साक्ष्य पेश करने का निर्देश दिया जा सकता है, लेकिन इसका मतलब यह नहीं होगा कि एक दोषी अधिकारी को उसके खिलाफ लगाए गए आरोपों के लिए आंशिक रूप से दोषी ठहराए जाने के बावजूद उन्हीं आरोपों पर एक और जांच शुरू करने का निर्देश दिया जाएगा, जो कि प्रथम जांच में साबित नहीं हो सके है, जो नहीं किया जा सकता है। यह स्वीकार किया जाता है कि अनुशासनात्मक प्राधिकारी का कथित आदेश कानून की दृष्टि से मान्य नहीं था। (पैरा 5)

के.आर.देब बनाम केंद्रीय उत्पाद शुल्क कलेक्टर, शिलांग (1971) 2 एससीसी 102, संदर्भित।

1.2 इस बीच पन्द्रह वर्ष बीत गये। आमतौर पर, हालांकि, सजा की मात्रा में हस्तक्षेप नहीं किया जाएगा, लेकिन इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल नियमों के नियम 27 का अनुपालन सख्त अर्थ में ना करके अपीलार्थी की सेवाओं को बर्खास्त करने के आदेश के बाद एक नई जांच के लिए निर्देशित किया और अपने आप को एक गलत दिशा में निर्देशित किया, प्रकरण के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों में, जिसे एक मिसाल नहीं माना जा सकता, भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत विवेकाधीन क्षेत्राधिकार का प्रयोग

करते हुए अपीलार्थी को सेवा में बहाल करने का निर्देश दिया जाना चाहिए। (पैरा 8 और 9)

1.3 पिछला वेतन स्वचालित रूप से दिए जाने का निर्देश नहीं दिया जा सकता। इसके लिए कई कारकों को ध्यान में रखना आवश्यक है। आरोपित कदाचार वर्ष 1992 में किया गया था। अपीलार्थी ने स्वीकृत रूप से उचित समय के भीतर उच्च न्यायालय का रुख नहीं किया। उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी की ओर से देरी और लापरवाही को ध्यान में रखते हु न्यायिक पुनर्विलोकन की अपनी शक्ति का प्रयोग करने से इनकार कर दिया था। उक्त तथ्य को ध्यान में रखते हुए, यदि अपीलार्थी को उक्त अवधि के लिए पिछला वेतन देने से इनकार कर दिया जाता है, तो न्याय का हित सुरक्षित रहेगा। हालांकि, अपीलार्थी को सेवा में बहाल किया जाना चाहिए और सभी परिणामी लाभ दिए जाने चाहिए। (पैरा 11, 12 और 13)

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: सिविल अपील संख्या 4493/2007

(कलकत्ता उच्च न्यायालय के एफ.एम.ए नंबर 594/2003 में दिनांक 09.11.2006 को पारित निर्णय और अंतिम आदेश से।)

विकास कर गुप्ता, बिकास रंजन निओगी, आर. के. घरई और वी. शिवासुब्रमण्यन वास्ते अपीलार्थी

ए. शरण, ए.एस.जी., बी. सुनीता राव और सुषमा सूरी वास्ते उत्तरदाता

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति एस. बी. सिन्हा, द्वारा दिया गया था।

अनुमति प्रदान की गई।

1. यहां अपीलार्थी को केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल में कांस्टेबल के रूप में नियुक्त किया गया था। वह कथित तौर पर 17.2.1992 को चिकित्सा अवकाश पर चले गए। उन्होंने 1.4.992 को डयूटी के लिए रिपोर्ट किया। उन्हें चिकित्सकीय रूप से फिट पाया गया और 6.4.1992 को ऐसा घोषित कर दिया गया। उन्होंने फिर से चिकित्सा अवकाश के लिए आवेदन किया और बिना अवकाश स्वीकृत हुए उन्होंने 9.4.1992 को अनाधिकृत रूप से अपना पदस्थापन का स्थान छोड़ दिया। वह 67 दिनों की अवधि तक अनाधिकृत रूप से अनुपस्थित रहे। वह 12.7.1992 को ही अपनी ड्यूटी पर वापस लौटे। अनाधिकृत रूप से अनुपस्थित रहने के आरोप में उन्हें सिविल लाइंस में सात दिन के कारावास की सजा सुनाई गई। इस आदेश के विरूद्ध उन्होंने अभ्यावेदन दिया। हालांकि, उक्त अभ्यावेदन को उचित माध्यम से नहीं भेजा गया, जिसके बाद उनके खिलाफ फिर से कार्यवाही शुरू की गई। उन्हें सिविल लाइंस में दस दिनों तक कैद में रखने का निर्देश दिया गया था और इस आधार पर कि उन्होंने सिविल लाइंस में इस तरह की कारावास की आवश्यकताओं का पालन करने से इनकार कर दिया था, उनके खिलाफ एक और अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू की गई थी।

उक्त कार्यवाही में उन पर लगे आरोपों को आंशिक रूप से सिद्ध माना गया। उन्हें सेवा से बर्खास्त कर दिया गया लेकिन फिर एक और अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू करने का निर्देश दिया गया।

2. बर्खास्तगी का आदेश वर्ष 1994 में पारित किया गया था। उन्होंने इसके खिलाफ अपील दायर की। उनके द्वारा दायर अपील भी 5.4.1995 को खारिज कर दी गई।

3. उन्होंने वर्ष 1997 में बर्खास्तगी के उक्त आदेश पर सवाल उठाते हुए कलकत्ता उच्च न्यायालय के समक्ष एक रिट याचिका दायर की, जिसे ॅच् 85 ध्1997 के रूप में चिंहित किया गया था। इस आधार पर कि उक्त रिट याचिका दो साल के अंतराल के बाद दायर की गई थी, उच्च न्यायालय के एक विद्वान एकल न्यायाधीश ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत अपने विवेकाधीन क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने से इंकार कर दिया। इससे व्यथित और असंतुष्ट होकर इसके खिलाफ इंट्रा कोर्ट अपील दायर की गई। 9.11.2006 के आक्षेपित निर्णय के कारण, उक्त अपील को भी यह कहते हुए खारिज कर दिया गया हैः

> ‘‘..अपील 05.4.95 को खारिज कर दी गई थी लेकिन रिट याचिका 09.5.97 को दायर की गई थी। रिट याचिका के चारों कोनों के भीतर रिट याचिकाकर्ता/अपीलार्थी ने रिट

में क्षेत्राधिकार इस न्यायालय को स्थानांतरित करने के लिए इतने लंबे विलंब का कोई कारण नहीं बताया है।

(2006)4 सुप्रीम कोर्ट में पृष्ठ 322 पर रिपोर्ट केस में यह निर्धारित किया गया है कि विलंब या चूक उन कारकों में से एक है जिसे उच्च न्यायालय द्वारा ध्यान में रखा जाना चाहिए जब वे संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत अपनी विवेकाधीन शक्तियों का प्रयोग करते हैं। किसी उपयुक्त मामले में उच्च न्यायालय अपनी असाधारण शक्तियों का प्रयोग करने से इंकार कर सकता है यदि आवेदक की ओर से अपने अधिकार का दावा करने में ऐसी लापरवाही या चूक हुई हो, जो समय के बीतने और अन्य परिस्थितियों के साथ मिलकर विपरीत पक्ष के लिए हानि का कारण बनती हो।

इस मामले में रिट याचिकाकर्ता/अपीलार्थी ने कई वर्षों के अस्पष्ट विलंब के बाद रिट क्षेत्राधिकार में न्यायालय की शक्ति को लागू करने की प्रार्थना की है। उन्होंने अपने आचरण से उन्हें दी गई सजा स्वीकार कर ली थी। अध्याय बंद हो गया था। अब एक बार फिर कई वर्षों का लंबा समय बीत जाने के बाद उक्त बंद अध्याय को

दोबारा नहीं खोला जा सकता है। इस प्रकार, विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा अत्यधिक देरी के आधार पर रिट याचिका को खारिज करना पूरी तरह से उचित था।"

इस प्रकार अपीलार्थी हमारे सामने है।

4. अपीलार्थी की ओर उपस्थित हुए विद्वान वकील ने अपनी अपील के समर्थन में कहा कि इस तरह की स्थिति में उच्च न्यायालय को रिट याचिका पर विचार करने से इंकार नहीं करना चाहिए था और साथ ही अपीलार्थी द्वारा यहां दायर की गई लेटर्स पेटेंट अपील को भी केवल विलंब और चूक के आधार पर स्वीकार करने से इनकार नहीं करना चाहिए था। जिसके परिणामस्वरूप उसके साथ स्पष्ट अन्याय हुआ है। विद्वान वकील का कहना है कि केंन्द्रीय रिजर्व पुलिस बल नियमों के नियम 27 के अनुसार, यह पाये जाने के बाद कि, पहली जांच में आरोप आंशिक रूप से साबित हो गए हैं, प्रत्यर्थी दूसरी जांच शुरू नहीं कर सकता था। इसके अलावा, यह तर्क दिया गया कि केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल अधिनियम में और उसके तहत बनाए गए नियमों में, सिविल लाइंस के लिए कारावास की सजा देने का कोई प्रावधान मौजूद नहीं है, जो केवल सेना अधिनियम द्वारा शासित व्यक्तियों पर लागू होता था।

5. प्रश्न यह है कि क्या सिविल लाइंस में कारावास की सजा का निर्देश दिया जा सकता था या हमें हिरासत में नहीं लेना चाहिए क्योंकि

हम अपीलार्थी के विद्वान वकील द्वारा उठाए गए तर्क से सहमत हैं कि अनुशासनात्मक प्राधिकारी का कथित आदेश दिनांक 5.4.1995 कानून के तहत मान्य नही था। केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल नियम 1955 का नियम 27, अन्य बातों के साथ-साथ, विभागीय जांच करने की प्रक्रिया निर्धारित करता है। एक बार अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू हो जाने के बाद, उसे उसके तार्किक अंत तक लाया जाना चाहिए, जिसका अर्थ है कि इस निष्कर्ष पर पहुंचना आवश्यक है कि अपचारी अधिकारी उसके खिलाफ लगाए गए आरोपों का दोषी है या नहीं। दी गई परिस्थिति में अतिरिक्त साक्ष्य पेश करने का निर्देश दिया जा सकता है लेकिन इसका यह मतलब नहीं होगा कि एक अपचारी अधिकारी को उसके खिलाफ लगाए गए आरोपों के लिए आंशिक रूप से दोषी ठहराए जाने के बावजूद उन्ही आरोपों पर एक और जांच शुरू करने का निर्देश दिया जाए,जिसे पहली जांच में साबित नहीं किया जा सका।

6. के. आर. देब बनाम केंद्रीय उत्पाद शुल्क कलेक्टर, शिलांग, (1971) 2 एससीसी 102 में, इस न्यायालय ने केंद्रीय सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण और अपील) नियम, 1957 के नियम 15 (1) में निहित प्रावधानों पर विचार करते हुए निम्नानुसार निर्धारित किया:

> "12. हमें ऐसा लगता है कि नियम 15, प्रथम दृष्टया, वास्तव में एक जांच का प्रावधान करता है, लेकिन यह

संभव हो सकता है यदि किसी विशेष मामले में कोई उचित जांच नहीं हुई है क्योंकि जांच में कोई गंभीर दोष आ गया है या कुछ महत्वपूर्ण गवाह जांच के समय उपलब्ध नहीं थे या किसी अन्य कारण से उनका परीक्षण नहीं किया गया, तो अनुशासनात्मक प्राधिकारी जांच अधिकारी से आगे के साक्ष्य दर्ज करने के लिए कह सकते हैं। लेकिन नियम 15 में पिछली जांचों को इस आधार पर पूरी तरह से खारिज करने का कोई प्रावधान नहीं हैं कि जांच अधिकारी या अधिकारियों की रिपोर्ट अनुशासनात्मक प्राधिकारी को अपील नहीं करती है। अनुशासनात्मक प्राधिकारी के पास साक्ष्य पर पुनर्विचार करने और नियम 9 तहत अपने निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए पर्याप्त शक्तियां हैं।

13. हमारे विचार में नियम ऐसी कार्यवाही प्रतिबिंबित नहीं करते जैसी 13 फरवरी, 1962 को कलेक्टर द्वारा की गई। हमें ऐसा लगता है कि कलेक्टर ने स्वयं जिम्मेदारी लेने के बजाय अपीलकर्ता के खिलाफ रिपोर्ट करने के लिए किसी अधिकारी को नियुक्त करने के लिए दृढ़ संकल्प था। अपनाई गई प्रक्रिया न केवल नियमों के

अनुकूल नहीं थी बल्कि अपीलकर्ता को परेशान करने वाली थी।"

7. अगला प्रश्न जो हमारे विचार के लिए उत्पन्न होता है वह यह है कि क्या हम सामान्य नियम का पालन करेंगे, अर्थात् विवादित निर्णय को अपास्त कर दें और मामले को वापस उच्च न्यायालय में भेज दें या मामले से स्वयं व्यवहार करें। एक अन्य विकल्प, जो हमारे पास उपलब्ध है वह अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा दर्ज की गई सजा को अपास्त करना और उच्च न्यायालय से अनुशासनात्मक कार्यवाही में रिकॉर्ड पर लाई गई सामग्री के आधार पर मामले पर नए सिरे से विचार करने का अनुरोध करें।

8. तथापि, इस बीच पन्द्रह वर्ष बीत गये। आमतौर पर, हालांकि, हम सजा की मात्रा में हस्तक्षेप नहीं करेंगे, लेकिन इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि अनुशासनात्मक प्राधिकारी के द्वारा केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल नियमों के नियम 27 का पालन सख्त अर्थों में ना करने के कारण स्वयं को गलत दिशा में निर्देशित किया और अपीलार्थी को सेवा से बर्खास्त करने के आदेश देते हुए आगे और जांच करने का निर्देश दिया गया है। प्रकरण के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों में, जिसे कि एक मिसाल नहीं माना जा सकता, हम इस मत के है कि हम भारत के संविधान के

अनुच्छेद 142 के तहत अपने विवेकाधीन क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए एक उचित आदेश पारित करेंगें।

9. हमारे विचार में उपरोक्त कारणों और उपरोक्त निष्कर्ष के आधार पर अपीलार्थी को सेवा में बहाल करने का निर्देश दिया जाना चाहिए। हालांकि, सवाल यह है कि क्या उसे बकाया वेतन दिया जाना चाहिए। हम सोचते है, नहीं।

10. विद्वान वकील दृढ़तापूर्वक कहते हैं कि इस प्रकृति की स्थिति में, जहां अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा की गई अवैधता उसके चेहरे पर स्पष्ट है, अपीलार्थी को बकाया वेतन से इनकार नहीं किया जाना चाहिए।

11. अब यह घिसा-पिटा कानून है कि बकाया वेतन स्वतः देने का निर्देश नहीं दिया जा सकता। इसके लिए कई कारकों को ध्यान में रखना आवश्यक है। इसके अलावा, हम इस सवाल पर न तो गए हैं और न ही जा सकते थे कि क्या अपीलार्था ने वास्तव में कोई कदाचार किया है या नहीं क्योंकि हम केवल तकनीकी आधार पर सजा के विवादित आदेश को रद्द करने के इच्छुक हैं।

12. यह कदाचार वर्ष 1992 में किये जाने का आरोप है। यह स्वीकृत है कि उन्होंने उचित समय के भीतर उच्च न्यायालय का रुख नहीं किया । उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी की ओर से देरी और लापरवाही को

ध्यान में रखते हुए न्यायिक समीक्षा की अपनी शक्ति का प्रयोग करने से इंकार कर दिया था।

13. उक्त तथ्य को ध्यान में रखते हुए, हम इस मत के है कि यदि अपीलार्थी को उक्त अवधि के लिए पिछले वेतन देने से वंचित कर दिया जाता है तो न्याय का हित सुरक्षित रहेगा। हालांकि, उन्हें सेवा में बहाल किया जाना चाहिए और अन्य सभी परिणामी लाभ दिए जाने चाहिए।

14. उपरोक्त सीमा तक अपील स्वीकार की जाती है। हालांकि, इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं दिया जाएगा।

एन. जे. अपील आंशिक रूप से स्वीकृत

यह अनुवाद सुवास टूल की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी अभिषेक कुमार, आर.जे.एस. द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।